P: ISSN No. 2231-0045 RNI No. UPBIL/2012/55438 VOL.-9, ISSUE-2 November -2020
E: ISSN No. 2349-9435 Periodic Research

मेहरुन्निसा परवेज़ के औपन्यासिक स्त्री पात्रों का संवेदनात्मक विश्लेषण

Sensitive Analysis of Mehrunnisa Parvez Novel's Female Characters

Paper Submission: 10/11/2020, Date of Acceptance: 26/11/2020, Date of Publication: 27/11/2020

ज़ेबी नाज़
सहायक प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
राजकीय रज़ा स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
रामपुर, उ0प्र0, भारत

सारांश

सचेतन प्रकृति में नारी एक स्वतंत्र सचेतन ईकाई है। नर व नारी के परस्पर सम्बन्धों से ही इस विशाल सृष्टि का सृजन हुआ है। नारी सृष्टि के साथ–साथ साहित्य का भी केन्द्र रही है। अपने दिव्य एवं अलौकिक सौन्दर्य तथा असीमित मानवीय गुणों के कारण ही नारी पूरे संसार में सदा से विद्वानों, कलाकारों व कवियों का आकर्षण एवं साहित्य का प्राण रही है। साहित्य के क्षेत्र में भी नारी सृजन की प्रेरणा एवं वर्ण्य विषय के साथ–साथ सृजनकर्ता के रूप में भी साहित्य को नव दिशा व दशा प्रदान करती रही है।

हिन्दी उपन्यास साहित्य में मेहरुन्निसा परवेज़ नारी चेतना को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली एक महत्वपूर्ण लेखिका हैं। इनकी रचनाओं में आदिवासियों की गरीबी, बदहाली एवं शोषण की समस्या का विशेष चित्रण है। मेहरुन्निसा परवेज़ ने अपने औपन्यासिक स्त्री पात्रों के माध्यम से महिलाओं की दयनीय पारिवारिक–सामाजिक–धार्मिक स्थिति के यथार्थ अंकन के साथ ही संकीर्ण मान्यताओं के विरुद्ध उनके विद्रोह को बखूबी चित्रित किया।

प्रस्तुत शोध पत्र में मेहरुन्निसा परवेज़ के उपन्यासों के विशेष संदर्भ में उनके स्त्री पात्रों का संवेदनात्मक विश्लेषण–मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। साथ ही मेहरुनिसा परवेज़ के सशक्त स्त्री पात्रों के माध्यम से उनके स्त्रीवादी दर्शन को उद्घाटित करने एवं स्त्रीत्व की अवधारणा को संवेदनात्मक गहनता सहित अंकित करने का प्रयास किया गया है।

Woman is an independent conscious entity in conscious nature. This huge creation has been created by the relationship between male and female. Women have been the center of literature as well as creation. Due to her divine and supernatural beauty and unlimited human qualities, women have always been the soul of scholars, artists and poets and literature in the whole world. In the field of literature too, women have been providing new direction and condition to the literature as the creator along with the inspiration and descent of creation.

In Hindi novel literature, Mehrunnisa Parvez is an important writer who gives expression to the female consciousness. His works have a special depiction of the problems of poverty, plight and exploitation of tribals. Mehrunnisa Parvez, through her novel feminine characters, accurately portrayed the pathetic family-socio-religious status of women as well as her rebellion against narrow beliefs.

In the research paper presented, Mehrunnisa Parvez attempts to sensitively analyze and evaluate her female characters with special reference to the novels. Also, through the strong female characters of Mehrunisa Parvez, an attempt has been made to reveal her feminist philosophy and to characterize the concept of femininity with sensitive depth.

मुख्य शब्द : नारी चेतन, स्वत्व, उपन्यास, महिला लेखिकाएं, मेहरुन्निसा परवेज़, सशक्त, मूल्यांकन, संवेदना, विश्लेषण।
Women Consciousness, Self, Novel, Women Writers, Mehrunnisa Parvez, Empower, Evaluate, Sensate, Analyze.

P: ISSN No. 2231-0045 RNI No. UPBIL/2012/55438 VOL.-9, ISSUE-2 November -2020
E: ISSN No. 2349-9435 Periodic Research

प्रस्तावना

विश्व के प्रत्येक अंश की अपनी विशेषता होती है। उस विशेषता के बलबूते पर वह अंश अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने में सफल होता है। विश्व का प्रत्येक अंश जड़–चेतना की विशाल परिधि में समेट लिया गया है। प्रकृति की ओर से चेतन जगत में केवल दो रूपों की सृष्टि हुई है– नर एवं मादा। पशु जगत, जीव–जन्तु, पेड़–पौधे आदि का विकास भी इन्हीं दो रूपों में पाया जाता है। चेतन जगत का सर्वाधिक प्रभावशाली अंश मानव है। सचेतन प्रकृति में नारी एक स्वतंत्र सचेतन इकाई है। नर और नारी के परस्पर सम्बन्धों से ही इस विशाल सृष्टि का विकास हुआ है।

नारी चेतना के संदर्भ में अतीत के परिदृश्य में प्रकृति और पुरुष भले ही समाज के चिन्तन का अनिवार्य केन्द्र रहे हों लेकिन आधुनिक युग में नारी और नैतिकता समाज के चिन्तन और चारित्र्य के केन्द्र बिन्दु हैं। नारी के स्वयं के और उसके आस–पास के वातावरण को समझाना और उसकी बातों का विशलेषण–मूल्यांकन करना ही नारी चेतन है। बीसवीं शताब्दी के पांचवे दशक में हिन्दी कथा साहित्य में नारी चेतन की यथार्थ अभिव्यक्ति की दृष्टि से महिला कथाकार मेहरून्निसा परवेज का प्रयास सराहनीय रहा है। स्वयं संवेदनशील नारी होने के नाते उन्होंने नारी अस्मिता की तलाश बड़ी गहराई और जद्दोजहद के साथ की।

अध्ययन का उद्देश्य

उपन्यास कथा साहित्य की अति प्राचीन एवं अत्यधिक महत्वपूर्ण साहित्यिक विधा है। रचनाकारों ने अपने वैयक्तिक उद्गार मात्र ही नहीं अपितु सामाजिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक महत्व के अहम मुद्दों, तत्वों व कारकों को अभिव्यक्त करने के एक सशक्त माध्यम के रूप में इस विधा का उपयोग किया है। स्त्री विमर्शवादी अवधारणा को भी हिन्दी उपन्यास साहित्य में प्रखर संवेदनात्मक दृष्टि के साथ अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य हिन्दी उपन्यास साहित्य में अपनी अहम पहचान रखने वाली लेखिका मेहरुन्निसा परवेज़ के औपन्यासिक स्त्री पात्रों का माध्यम से उनके स्त्रीवादी विचारों, चिन्तन एवं दर्शन को समग्र रूप से विश्लेषित करना है। साथ ही वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में स्त्री सम्बन्धी वैयक्तिक–पारिवारिक–सामाजिक–नैतिक रूढ़ मान्यताओं को समूलतः नष्ट कर समतावादी समाज की स्थापना हेतु मेहरुन्निसा परवेज के प्रयासों को रेखांकित करना भी उक्त शोध पत्र का विशेष प्रयोजन है।

साहित्यावलोकन

प्राचीन भारतीय वाड्.मय से लेकर वर्तमान समय तक नारी चेतन किसी न किसी रूप में साहित्य का विषय रही है। विनय कुमार पाठक के अनुसार, ''आज से लगभग सवा सौ साल पहले श्रद्धाराम फुल्लौरी के उपन्यास 'भाग्यवती' (1877) से लेकर आज तक स्त्री विमर्श ने आगे कदम बढ़ाया ही है, छलांग भले ही न लगाई हो। अलग–अलग पैमानों पर ही सही प्रगति हुई है।''

हिन्दी उपन्यास साहित्य पर यदि नज़र डालें तो स्वतंत्रता पूर्व हो या स्वातन्त्र्योत्तर युग हो, नारी चित्रण उसका एक अविभाज्य अंग है। महिला उपन्यासकारों के साथ–साथ पुरुष उपन्यासकारों ने भी नारी समस्या एवं नारी के विभिन्न रूपों को अपने उपन्यासों के केन्द्र में रखा है।

भारतेन्दु युग में पहली बार उपन्यासकारों का ध्यान नारी की सामाजिक दशा की ओर आकृष्ट हुआ। स्वयं भारतेन्दु नारी की दयनीय स्थिति में सुधार लाने के पक्षधर थे। द्विवेदीयुगीन उपन्यासकारों का प्रमुख लक्ष्य सामाजिक कुरीतियों को सामने लाकर उनका विरोध करना ही रहा है। हरिऔध का 'अधखिला फूल' उपन्यास इसका सशक्त उदाहरण है।

प्रेमचन्द युग विचार के क्षेत्र में संक्रान्ति और संघर्ष का काल था। यथार्थ जीवन की ज्वलंत समस्याओं को अपना प्रतिपाद्य बनाने पर भी प्रेमचंदयुगीन लेखक परम्परागत भारतीय जीवन मूल्यों के प्रति अपने मोह को छोड़ नहीं सके और उसकी परिणति आदर्शोंमुख यथार्थवाद में की। साहित्य में स्त्री को लेकर इस युग में परम्परावादी दृष्टिकोण ही विद्यमान रहा। जयशंकर प्रसाद तथा भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में जागरुक नारी के चित्रण की कोशिश उल्लेखनीय है।

प्रेमचन्दोत्तर युग में जैनेन्द्र ने अपने उपन्यास 'सुनीता' (1935) की सुनीता व 'कल्याणी' (1939) उपन्यास की कल्याणी आदि नारी पात्रों के माध्यम से नारी के आन्तरिक जगत का विश्लेषण करते हुए नारी की समस्याओं व उनकी अस्मिता को भिन्न रूप में उपस्थित करने का अनुपम प्रयास किया। अज्ञेय के 'शेखर एक जीवनी' (1940) उपन्यास की शशि और 'नदी के द्वीप' (1951)की रेखा सशक्त नारी पात्र हैं। फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आंचल' (1954) की कमली एवं लक्ष्मी आदि नारी चरित्र अपनी इच्छा को महत्व देने वाली सजग स्त्रियां हैं। रांगेय राघव के 'कब तक पुकारूं' की प्यारी और कजरी भी नारी चेतना का प्रतिनिधित्व करने वाले नारी पात्र हैं। जैनेन्द्र का 'दशार्क' उपन्यास नारी सशक्तता का समर्थन करता है। 'त्यागपत्र' की मृणाल जहां आत्मपीड़न का शिकार है वहीं 'दशार्क' की रंजना टूटती नहीं है, वह अपना रास्ता स्वयं बनाती है।

बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक से हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में महिला लेखिकाओं के आगमन ने स्त्री विमर्श को नई दिशा दी। उषा प्रियम्वदा, मृदुला गर्ग, मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, मैत्रेयी पुष्पा, मेहरुन्निसा परवेज़ एवं नासिरा शर्मा आदि लेखिकाओं के उपन्यासों में ऐसी पढ़ी–लिखी, स्वावलम्बी, चेतनासम्पन्न स्त्री प्रतिपाद्य बनी जिसमें परम्परागत सामाजिक–नैतिक मान्यताओं तथा सदियों के व्यवहार द्वारा पोषित नारी संहिता के प्रति तीव्र नकार है। राधिका (रुकोगी नहीं राधिका–1967), रत्ती (सूरजमुखी अंधेरे के–1972), शकुन (आपका बन्टी–1971), शाल्मली (शाल्मली–1987), प्रिया (छिन्नमस्ता–1993), महरुख़ (ठीकरे की मंगनी–1989), मंदा (इदन्नमम–1994) एवं सारंग (चाक–1997) आदि

नारी चेतना के संवाहक कुछ ऐसे स्त्री चरित्र हैं जो मर्यादा पालन के नाम पर अपनी असिमता की तिलांजलि देने के स्थान पर प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए अपनी पहचान बनाते हैं।

आधुनिक हिन्दी उपन्यास लेखन में स्त्री विमर्श को वैचारिक दृढ़ता एवं संवेदनात्मक गहराई प्रदान करने वाली लेखिकाओं में मेहरुन्निसा परवेज़ का नाम अन्यतम है। प्रस्तुत शोध पत्र में मेहरुन्निसा परवेज़ के औपन्यासिक स्त्री पात्रों के अध्ययन के माध्यम से उनके नारीवादी चिंतन–दर्शन को समझने एवं विश्लेषित करने के साथ–साथ उनके उपन्यासों के सशक्त, सजग तथा संवेदनशील चरित्रों में सन्निहित सूक्ष्म चारित्रिक विशेषताओं को आत्मसात कर स्त्री विमर्श सम्बन्धी संतुलित दृष्टिकोण के सृजन का प्रयास किया गया है।

मेहरुन्निसा परवेज़ के औपन्यासिक स्त्री पात्रों का संवेदनात्मक विश्लेषण

मेहरुन्निसा परवेज़ हिन्दी साहित्य जगत का एक जाना–माना नाम है। हिन्दी कथा साहित्य में इनका प्रवेश बीसवीं शताब्दी के पांचवे दशक में होता है। इनकी रचनाओं में जहां आदिवासियों की गरीबी व शोषण की समस्या को विशेष रूप से स्थान दिया गया है, वहीं स्त्री सम्बन्धी संवेदनाएं भी मेहरुन्निसा परवेज़ की कथा संवेदना का मुख्य आधार बनीं। इनके औपन्यासिक स्त्री पात्र सशक्त एवं संवेदनात्मक रूप से सबल हैं। वे अति विसंगत स्थितियों में भी जीने और बेहद कठिन चक्रव्यूहों से निकलने की क्षमता रखते हैं। मेहरुन्निसा परवेज के स्त्री पात्र घर, परिवार, गांव व समाज में जीते हुए उनसे ऊपर उठते दिखाई देते हैं। उनकी क्षमताएं घर, परिवार, गांव, समाज और देश का कायाकल्प करने का जीवट लिए हुए हैं। वे स्त्रीत्व को देह की संकीर्ण परिधि से मुक्त कर निजता एवं अस्मिता से संबंध करने को प्रयत्नरत हैं।

मेहरुन्निसा परवेज के पहले उपन्यास 'उसका घर' (1972)से लेकर सभी उपन्यासों की पृष्ठभूमि मध्य प्रदेश का बस्तर क्षेत्र है। ''इन उपन्यासों में विशेष रूप से 'कोरजा' (1977) में बस्तर का क्षेत्र अपनी सारी भौगोलिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विशेषताओं के साथ उपस्थित है।''[1]

मेहरुन्निसा परवेज़ ने मुख्यतः मुस्लिम समाज को आधार बनाकर स्त्री की पीड़ादायक सामाजिक स्थिति, उसके भावनात्मक अकेलेपन एवं सन्नाटे को आत्मीयतापूर्ण सच्चाई के साथ उजागर किया है। मेहरुन्निसा की विशेष औपन्यासिक पहचान मुस्लिम सामज में पुरुष समाज द्वारा स्त्री के देह शोषण के संवेदनापूर्ण अंकन में निहित है।

मेहरुन्निसा परवेज़ के उपन्यास 'कोरजा' की साजो का चरित्र इसका सशक्त प्रमाण है। पति उस्मान के इस दुनिया से चले जाने पर साजो अत्यन्त विपरीत स्थितियों में जीती है। अपना और अपने तीन बच्चों (रफीक, शफीक व मुन्नू) के पेट पालने की लाचारी एवं बेरहम समाज में सिर से छत न छिन जाने की मजबूरी बेवा साजो को जुम्मन के पलंग पर ला पटकती है। अपने बच्चों को सुंदर एवं सम्मानजनक भविष्य देने के लिए उसे यह मौन समझौता करना पड़ता है। संसार की इस कटु सच्चाई से यदि वह जूझ रही थीं, तो केवल अपने बच्चों को पढ़ाने–लिखाने के लिए ही, लेकिन जब मास्टर साहब रफीक और शफीक की दो महीने की फीस जमा न होने तथा उनके पास किताबें न होने के कारण उन्हें स्कूल से वापस भेज देते हैं तो साजो तमतमाए हुए चेहरा लिए कहती है– ''इस तरह बच्चे बिना पढ़े रह जाएं यह मुझसे नहीं देखा जाएगा।''[2]

परिस्थितिगत विवशता के नाम पर पुरुष समाज की निरंकुशता झेलती साजो अपने भीतर की पीड़ा को शब्दों में अभिव्यक्त करती अम्मा से कहती है– ''क्यों सुसराल का उलाहना देती हो? यहां कोई तुम्हारा दिया नहीं खा रहे, मैं भी अपना शरीर बेच–बेचकर यह दीवारों का सहारा रखे हुए हूं वरना सड़क पर बैठने की नौबत थी तुम लोगों की।''[3] मगर रब्बो आपा नसीमा और अम्मा भी यह जानती हैं कि, ''अगर साजो खाला ने यह कदम न उठाया होता तो पता नहीं आज हम सब कहां मारे–मारे फिरते।''[4] पिछड़े मुस्लिम समाज की एक स्त्री द्वारा प्रचलित सामाजिक संहिता को ताक में रखकर अपनी वर्तमान स्थिति के प्रति बारम्बार ऐसी टिप्पणी करना चौंकाता है।

'कोरजा' की राबिया के व्यक्तित्व में भी परिवर्तन की झलक दिखाई पड़ती है। नसीमा की रब्बो आपा देखने में भले ही खूबसूरत थी किन्तु उन्होंने जीवन में आरम्भ से ही अनेक कठिनाइयां झेली थीं। रब्बो के पैदा होते ही उसकी मां ने दुनिया को विदा कह दिया। बाप ने दूसरी शादी कर ली, दादी चल बसीं। बारह साल की हुई कि बाप का साया भी उठ गया। घायल बचपन की दुखद स्मृतियों से पीछा छुड़ाती रब्बो एहसान की ओर आकर्षित हुई। किशोर मन की भावनाएं कब प्रेम मे बदल गईं, पता ही न चला। रब्बो एहसान संग जीवन बिताने के सपने देख रही थी, इसलिए गोंदिया वालों का रिश्ता आने पर घर में अपने विवाह की चर्चा चलते देख वह घबरा उठी। इस बीच कम्मो के माध्यम से उसे पता चलता है कि एहसान ने उससे विवाह करने से इंकार कर दिया, तो एक बार फिर बाल्यकाल की वे सारी स्मृतियां जीवित हो उठीं, जिसकी काली छाया से अभी भी उसका किशोर मन मुक्त नहीं हो पाया था। तिस पर इस मर्दवादी दुनिया के वीभत्स यथार्थ को झेलती साजो खाला की स्थिति, इस सबको देख राबिया फैसला करती है कि –''सुख का इन्तेजार करते–करते मैं नानी पर बोझ नहीं बनूंगी। मेरे नसीब में जो है उसे हंसकर सहूंगी बस।''[5]

रब्बो के इस निर्णय में हालातों की मजबूरी नहीं बल्कि स्त्री सशक्तीकरण की अवधारणा से अनजान असहाय एवं परनिर्भर समझी जाने वाली उन स्त्रियों की चेतनात्मक सजगता नजर आती है जो पितृसत्तात्मक व्यवस्था में अस्तित्व की गरिमा से वंचित की जाती रही हैं। यही नहीं सामन्ती व्यवस्था की रूढ़ परम्पराओं के चलते भावनात्मक शोषण झेलती रब्बो पुरुष की आत्मकेन्द्रित मानसिकता पर प्रहार करती हुई कहती है कि– ''मर्द हमेशा से बेरहम कुत्ते रहे हैं। बस हड्डियां चिचोड़ना जानते हैं और कुछ नहीं।''[6] स्पष्ट है कि मर्दवादी समाज के प्रति नवीन यथार्थपरक दृष्टिकोण से

सम्पन्न रब्बो हालातों से जूझने एवं विरोधों से संघर्ष करने का हौसला रखती है।

'कोरजा' की कम्मो भी लीक से हटकर चलने वालों में से है। कच्ची उम्र में ही उसके माता–पिता गुजर गए । सहारा देने वाले चचा भी कुछ समय पश्चात चल बसे। इस विकट परिस्थिति में कम्मो ने स्वयं को तो अत्यन्त दृढ़ता से संभाले–संजोए रखा। साथ ही अपनी अकेली हो गई चाची को भी हिम्मत दी। वह एक अन्तर्मुखी स्त्री है। जब कभी जीवन का खालीपन व सन्नाटा उसे चुभने लगता है, तो किसी से कुछ कहने के बजाय वह डायरी के पन्ने भर देती है। कम्मो ने अपने भीतर की उथल–पुथल से किसी को अवगत नहीं होने दिया। वह दुखी होते हुए भी सुख बांटने वाली लड़की है। उसका अटूट विश्वास है कि, ''समाज को या अपनी संस्कृति को बदलने वाले दुख तो पाते हैं पर शायद आने वाली पीढ़ी के लिए रास्ता जरूर बन जाता है।''[7]

'अकेला पलाश' (1981)की तहमीना एवं नाहिद– दोनों के व्यक्तित्व को सशक्त स्त्रियों के प्रभावशाली चरित्र के रूप में लिया गया है। स्वाभिमानी, होशियार और स्मार्ट तहमीना टूटे–बिखरे बचपन की किरचियों को जोड़ती वर्तमान को सुन्दर बनाती है। एक पत्नी के तमाम अधिकार पाने के लिए वह अपने पति जमशेद के सामने आ खड़ी होती है। 'पीली आंधी' (1997) की सोमा के समान शारीरिक सुख के नाम पर आत्मीयता रहित साहचर्य उसे स्वीकार नहीं। तभी तो पारम्परिक रूढ़िवादिता में पली–बढ़ी होने पर भी तहमीना सम्मानजनक सान्निध्य की बात करती हुई कहती है– ''तुम मेरे पति जरूर हो। समाज ने मेरे शरीर के साथ हर प्रकार का खिलवाड़ करने की अथॉर्टी तुम्हें दे रखी है। इसका यह मतलब नहीं कि तुम रोज मुझे मारो, रोज मेरी मृत्यु हो। आज से तुम मेरे पास मत आया करो। हमारा पति–पत्नी का सम्बन्ध भी खत्म समझो।''[8]

तहमीना के भीतर सामन्ती समाज की सड़ चुकी व्यवस्था के प्रति तीव्र रोष है। उसे एहसास है कि तुषार के संग में बढ़ती उसकी निकटता पुरूषसत्तामक समाज को असहनीय है, मगर फिर भी वह अपने कदम नहीं रोकती। स्त्री स्वातन्त्र्य विरोधी व्यवस्था के प्रति वह अपना क्रोध जताती हुई कहती है– ''जब मैंने घुट–घुटकर एक–एक पल बिताया था तब यह लोग कहां गए थे ? और क्या आज मुझे अपने मन से जीने का हक नहीं ?''[9] तहमीना को दिखावे का जीवन स्वीकार नहीं। इरादों की पक्की तथा अटल आत्मविश्वास वाली तहमीना किसी भी औरत का जीवन बरबाद होते नहीं देखना चाहती। इसलिए आश्रय की आस लगाए बैठी तमाम स्त्रियों को जागृत करती वह कहती है– ''धूप लगी हो छाया की सख्त जरूरत हो तब भी छाया के लिए ऐसे पेड़ के नीचे पनाह लो जो तुम्हें वास्तव में छाया दे सके। ऐसे पेड़ के नीचे मत खड़ी हो जो तुम्हें छाया भी न दे सके बल्कि उल्टा तुम्हारे ऊपर गिरे और तुम्हें तबाह कर दे।''[10]

'अकेला पलाश' की डॉ0 नाहिद का व्यक्तित्व भी सशक्त स्त्री का प्रतिनिधित्व करता हैं। सीरियस और रिजर्व नेचर की सुन्दर महिला नाहिद अपने सपनों को पूरा करने का हौसला रखती है। गरीब परिवार की होने के बावजूद नाहिद डॉक्टर बनती है और प्रैक्टिस करती है। उसे रूढ़िवादी विचारों में विश्वास नहीं। वह सामाजिक मान्यताओं को खोखला तथा बेबुनियाद मानती है। इसलिए तो एक परम्परावादी मुस्लिम परिवार के होते हुए भी वह डॉ0 महेश अग्रवाल को अपना जीवनसाथी चुनती है। नाहिद स्त्री सबलीकरण के लिए स्त्री आत्मनिर्भरता को अत्यंत आवश्यक मानती है। उसके अनुसार, ''औरत के बाहर काम करने से उसके मन में आत्मविश्वास आ जाता है।''[11] यही महत्वाकांक्षी नाहिद घर से पहली बार बाहर निकलने वाली तहमीना को अपने भय व शंकाओं को मिटाकर सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्र में समान दर्जा हासिल करने को प्रेरित करती हुई कहती है, ''तुम्हारा डर अब नौकरी करने से धीरे–धीरे खत्म हो जाएगा और तुम घरेलू और दब्बू किस्म की औरतों की हदों से बाहर आ जाओगी।''[12] नाहिद लीक से हटकर चलने वालों में से है। जिस तरह उसने अपना रास्ता स्वयं बनाया वैसे ही वह उम्मीद करती है कि तमाम स्त्रियां बंधी–बंधायी परिपाटी से मुक्त हों और अपने जीवन पर खुद का अधिकार प्राप्त करें। 'ठीकरे की मंगनी' की महरुख के समान नाहिद का मानना है कि – ''अपना रास्ता इंसान खुद बनाता है दूसरों के बनाए रास्ते पर चलना बेवकूफी है। अपने निर्णय खुद लो।''[13]

पुरुषसत्तामक हमारी सामाजिक संरचना में सारे अधिकार शासन और सत्ता सबकुछ पुरुष को प्राप्त है। पुरुष के पति बनते ही स्त्री अस्तित्व पर उसके एकाधिपत्य को सामाजिक स्वीकृति मिल जाती है। किसी भी पारम्पारिक रूढ़िवादी परिवार की स्त्री इस आधिपत्य को नकार नहीं सकती, लेकिन समरांगण की पृथा ऐसा करती है। नितान्त परम्परावादी संस्कृति में पली–बढ़ी पृथा देवी अपने भविष्य के असुरक्षा की और बढ़ने की पहली आहट पर ही सजग हो गई। उसे पत्नी धर्म के नाम पर स्त्रीत्व की बलि किसी प्रकार स्वीकार्य नहीं। पति मोहनलाल के द्वारा खुद को यों छोड़ जाने पर प्रथा प्रश्न करती है – ''ऐसी व्यवस्था कब तक चलेगी ? स्त्री कब तक गृहस्थी तथा पति की मोहताज बनी रहेगी, कहीं इसका अंत होना चाहिए न?''[14] पति का अपमानजनक रवैया उसको 'छिन्नमस्ता' की प्रिया के समान चुभता है। पौरुषिक दम्भ के चलते स्त्री अस्तित्व की अनदेखी उसको यह सवाल पूछने पर मजबूर कर देती है कि– ''एक पत्नी का अधिकार क्या है ? क्या वह घर में दी जाने वाली दावत में भी शरीक नहीं हो सकती ? घर में बड़े से बड़े अतिथि आते–जाते हैं परन्तु पत्नी का स्थान इतना छोटा क्यों है ?''[15] पति–पत्नी की समानता में विश्वास करने वाली पृथा सम्बन्ध की दृढ़ता पारस्परिक मैत्रीपूर्ण सहचार्य में मानती है। उसके अनुसार, ''बंधन तो सात फेरों का भी मजबूत नहीं होता। आस्था नहीं है तो सात फेरों की गांठ भी ढीली हो जाती है।''[16]

'पासंग' (2004)की बुलाकी बेगम (दादी), साबरा (मां) और कनी (बेटी) – तीनों पीढ़ियों के व्यक्तित्व में अद्भुत साहस है। बुलाकी बेगम अकेली औरत होते हुए भी तमाम विरोधी परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए न

केवल अपने बेटे को पालती है, बल्कि अपनी पोती रुकैया को भी पालती–पोसती है। भरी जवानी में वैधव्य झेलती बुलाकी ने अकेले आगे बढ़ने का निर्णय लेकर अत्यंत साहस का परिचय दिया – ''जिन्दगी की गाड़ी को आगे बढ़ाने के लिए तो कुछ तो करना था मुझे। वरना ऐसी पहाड़–सी जिन्दगी बिना आदमी के कैसे कटती?''[17] साबरा भले ही जगदलपुर के एक पारम्परिक मुस्लिम परिवार की बहू है लेकिन वह पति के गुजर जाने के पश्चात व्यर्थ के रीति–रिवाज निभाने एवं विधवा के कर्मकाण्डपूर्ण जीवन जीने से इंकार कर देती है और विवाह कर कोटपाड़ चली जाती है। कनी प्रचलित मानसिकता के विरुद्ध सोचने वाली पात्र है। उसके व्यक्तित्व का यह पक्ष बाल्यावस्था से ही दिखाई पड़ता है। कनी को गुड्डे–गुड़ियों का खेल अच्छा नहीं लगता। रिवाजों के प्रति उसमें तीव्र आक्रोश एवं नकार है। उसके अनुसार, ''फिर वही दस्तूर। क्या दस्तूर बदले नहीं जा सकते हैं ?''[18] वह स्त्रियों के अधिकार के लिए आवाज उठाती तथा औरतों को अपने जीवन से दुर्भाग्य को दूर करने को प्रेरित करती है। पौरुष का व्यर्थ दिखावा उसको असहनीय है। वैवाहिक विधानों पर वह प्रश्न खड़ा करती हुई कहती है कि, ''ब्याह के बाद पति मालिक बन जाता है ? क्या वही उसका हकदार बन गया ?''[19]

पासंग की बानो भी विवाहोपरान्त पुरुष के स्वामी बन जाने की प्रवृत्ति की विरोधी है। वह भी औरत के निर्णय के अधिकार की वकालत करती हुई कहती है – ''औरत किसे प्यार करे, किसे अपना शरीर दे, इस निर्णय का हक उसे मिलना चाहिए। जबरदस्ती से मनमानी करना, बिना इच्छा के सम्बन्ध रखना सब बंद होना चाहिए।''[20] कुंआरी मां बनने पर बानो के लाख मना करने पर भी उसका बच्चा उससे छीन लिया गया था। इस घटना ने बानो को इतना मजबूत कर दिया कि वह सामाजिक संहिता के पुराने ढर्रे को परिवर्तित करने का प्रण ले बैठी। वह कहती है – ''अपने को एक बार फिर ताकतवर बनाना होगा। बच्चों की वलदियत का हक अपने नाम वापस लेना होगा। अपने इंसान होने का सबूत देना होगा। दुनिया में उसका बराबर का हिस्सा है, यह बात बतानी होगी। आदमी की गुलामी से इंकार करना होगा।''[21]

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि हिन्दी कथा साहित्य में नई स्फूर्ति एवं नवीन चेतना जागृत करने वाली कथाकार मेहरुन्निसा परवेज़ के औपन्यासिक स्त्री पात्र स्त्री शक्ति, प्रतिबद्धता, संघर्ष एवं प्रतिकार का ज्वलन्त उदाहरण हैं। उनके उपन्यासों की स्त्रियां विद्रोह का बिगुल बजाती, परिवर्तन के लिए तत्पर एवं अपनी अस्मिता को बचाए व बनाए रखने के लिए सतत प्रयत्नरत हैं। मानवीय सम्पृक्तता, संवेदनात्मक सम्बद्धता तथा सहज भावप्रवणता उनके अस्तित्व का प्राण है। मेहरुन्निसा परवेज़ के प्रायः सभी औपन्यासिक स्त्री चरित्रों ने रूढ़ियों के बंद दरवाजे खोलकर स्वच्छ हवा एवं प्रकाश को संजोया तथा उन्मुक्त आकाश को दामन में समेटने का प्रयास किया। फिर चाहें वह कोरजा (1977) की कम्मो हो या 'अकेला पलाश' (1981) की तहमीना, 'समरांगण' (2002) की पृथा देवी हो या 'पासंग'(2004)की कनी हो। इनकी स्त्रियां पिछड़े हुए ग्रामीण वातावरण से होने के बावजूद जीवन के अवरोधों का डटकर सामना ही नहीं करतीं, वरन् विपरीत परिस्थितियों से निरन्तर संघर्ष करते हुए विजय भी हासिल करती हैं। कहना न होगा कि स्त्री सशक्तीकरण के प्रश्न को संवेदनात्मक गहराई से सम्बद्ध करना ही मेहरुन्निसा परवेज की विशिष्टता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *हिन्दी उपन्यास का इतिहास/ डॉ0 गोपालराय/राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली/ पृष्ठ संख्या 331.*
2. *कोरजा/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 74.*
3. *कोरजा/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 75.*
4. *कोरजा/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 72.*
5. *कोरजा/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 195.*
6. *कोरजा/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 181.*
7. *कोरजा/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/ पृष्ठ संख्या 108.*
8. *अकेला पलाश/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 81.*
9. *अकेला पलाश/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 151.*
10. *अकेला पलाश/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 10.*
11. *अकेला पलाश/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 23.*
12. *अकेला पलाश/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 23.*
13. *अकेला पलाश/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 33.*
14. *समरांगण/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 206.*
15. *समरांगण/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 319.*
16. *समरांगण/मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 270.*
17. *पासंग /मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 109.*
18. *पासंग /मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 247.*
19. *पासंग /मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 272.*
20. *पासंग /मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 316.*
21. पासंग /मेहरुन्निसा परवेज/वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या 315